कोयला और पेट्रोलियम कहाँ से आए?

उमा सुधीर

पहला तेल का कुआँ खोदे हुए 150 साल से ज़्यादा हो गए हैं। अभी भी धरती पर पेट्रोलियम की उत्पत्ति को लेकर हमारे पास दो प्रमुख विचार हैं। दोनों के अपनी-अपनी दलीलें और तर्क हैं। कौन सही और कौन गलत जानने से भी ज़्यादा ज़रूरी है कि ये विचार कहते क्या हैं?

जब से मैं धार के निकट एक जगह से होकर आई, तब से जीवाश्मों के बारे में सोच रही हूँ। इस जगह पर बहुत सारे समुद्री जीवों के जीवाश्म मिलते हैं। यहाँ समुद्री जीवाश्मों का मिलना विचित्र बात है क्योंकि यह जगह फिलहाल तो समुद्र से सैकड़ों किलोमीटर दूर है। मगर मुझे बताया गया कि अतीत में दो बार यह इलाका समुद्र के नीचे रहा है। इसलिए यहाँ दो युगों के समुद्री जीवाश्म मिलते हैं। मगर आप सोचेंगे कि जीवाश्मों का इस लेख के विषय से क्या लेना-देना। थोड़ा सब्र करेंगे, तो बताती हूँ।

यह सोचकर ही अचरज होता है कि धरती का हुलिया इतना बदलता रहता है। और उससे भी ज़्यादा अद्भुत बात यह है कि धरती की मौजूदा शक्ल को गढ़ने में सजीवों का कितना हाथ रहा है। मैं बचपन से ही जीवाश्मों के बारे में जानती थी। मगर मुझे यह बात हाल ही में पता चली कि कई विशाल संरचनाएँ भी जीवन की छाप को प्रकट करती हैं। इसके बारे में मुझे इल्म हुआ जब मैंने पढ़ा कि डोवर नामक स्थान के चॉक क्लिफ्स (चूने से बनी चट्टानें) सैकड़ों वर्षों तक समुद्री जीवों के कंकाल जमा होने के फलस्वरूप बने हैं। कंकाल के ये भण्डार समुद्र के पेंदे में तलछट के रूप में जमा होते गए और फिर लाखों सालों की अवधि में चट्टान जैसे कठोर हो गए। इनके कठोर होने का कारण यह

था कि इनके ऊपर उन कई और परतों का भारी दबाव था जो एक के बाद एक जमा होती जा रही थीं। बाद में, धरती के गर्भ में चल रही अन्य प्रक्रियाओं की वजह से, ये चट्टानें सतह पर आ गईं।

इसी तरह से जबलपुर के निकट संगमरमर की चट्टानों के बारे में सोचिए। यह जानी-मानी बात है कि संगमरमर का निर्माण तब होता है जब चूना पत्थर धरती की गहराइयों में धकेला जाता है जहाँ इसे न सिर्फ भारी दबाव का बल्कि अत्यधिक गर्मी का भी सामना करना पड़ता है। अर्थात् चूना पत्थर वह मूल तलछटी चट्टान है जो दबाव और ताप के प्रभाव से संगमरमर में कायान्तरित हो गई है। इसी प्रकार से, शेल नामक एक तलछटी चट्टान एक कायान्तरित चट्टान स्लेट में तबदील हुई है।

कोयला और पेट्रोलियम

चट्टानों और जीवाश्मों की इतनी बात करने के बाद कोयला और पेट्रोलियम पर आते हैं। आम तौर पर माना जाता है कि ये दोनों ऐसे पदार्थों से बने हैं जिनकी उत्पत्ति जैविक (यानी जीवन की क्रियाओं से) है। इस लेख में मैं कोयले व पेट्रोलियम की उत्पत्ति (या प्रस्तावित उत्पत्ति) के बारे में चर्चा करूँगी। सबसे पहले यह देखते हैं कि कोयले और पेट्रोलियम के बड़े-

कोयले की परतों में जीवों और वनस्पतियों के जीवाश्म मिलते हैं। यहाँ कोयले की परत पर पत्ती की छाप दिखाई दे रही है।

बड़े भण्डार कहाँ मिलते हैं। एक परिकल्पना यह है कि कोयला उन जगहों पर निर्मित हुआ जहाँ बड़ी मात्रा में जैविक पदार्थ ज़मीन पर मिट्टी के नीचे दफन हो गया था। यह जैविक पदार्थ जन्तुओं और वनस्पतियों, दोनों के मृत शरीर से बना था हालाँकि, कुछ लोग मानते हैं कि ये मूलतः वनस्पतियाँ ही थीं।

दूसरी ओर, पेट्रोलियम समुद्र के नीचे बना था। यह बात तो सही लगती है क्योंकि मुम्बई के तट के नज़दीक तेल के भण्डार हैं मगर अरब प्रायद्वीप में पाए जाने वाले सारे तेल कुँओं के बारे में क्या कहेंगे जो ठोस ज़मीन पर हैं? इनके बारे में परिकल्पना यह है कि ये इलाके पहले समुद्र के नीचे थे। फिर 'प्लेट्स' की सतत गति की वजह से कुछ इलाके ऊपर की ओर धकेले गए और कुछ इलाके नज़दीकी प्लेट्स के नीचे धँसते गए, तो सब कुछ उलट-पलट हो गया। इसलिए कई पेट्रोलियम भण्डार उन इलाकों में पाए जाते हैं, जो फिलहाल सूखी धरती पर हैं।

इस बात को लेकर कोई खास विवाद नहीं है कि कोयले की उत्पत्ति ज़मीन के नीचे जैविक पदार्थों के विशाल जमाव से हुई है। इस सन्दर्भ में आम सहमति बन पाने का एक कारण यह है कि कोयले के प्रस्तरों में बड़ी संख्या में जीवाश्म मिलते हैं - इनमें से कुछ जीवाश्म पत्तियों व अन्य नाज़ुक अंगों की छापें हैं। प्रस्तावित विचार यह है कि ये जीव मरने के तुरन्त बाद मिट्टी से ढँक गए थे। इसलिए ये हवा के सम्पर्क में नहीं रहे, और न ही तमाम किस्म के मृतभक्षियों के हत्थे चढ़े जो किसी भी जैविक पदार्थ को आनन-फानन में विघटित कर डालते हैं और प्रकृति में पोषक तत्वों की रिसायक्लिंग का काम करते हैं। यदि ये मृत जीव खुले में पड़े रहते तो विभिन्न बैक्टीरिया और फफूँद इन्हें पचा डालते मगर चूँकि ये दफन हो गए थे, इसलिए इनमें अलग ढंग के परिवर्तन हुए। मूलतः इनका निर्जलीकरण यानी डीहाइड्रेशन हुआ। अतः कोयला कमोबेश कार्बन से बना होता है।

पेट्रोलियम कैसे बना?

फिर पेट्रोलियम कैसे बना होगा? इसमें तो कोई जीवाश्म नहीं मिले हैं। पेट्रोलियम की उत्पत्ति का पहला सिद्धान्त मेंडेलीव ने दिया था। जी हाँ, वही मेंडेलीव जिन्होंने हमें आवर्त तालिका दी है। मेंडेलीव ने रसायन शास्त्र के कई क्षेत्रों में काम किया था और उनका एक योगदान पेट्रोलियम की अजैविक उत्पत्ति का सिद्धान्त है। मेंडेलीव और उनके कुछ अनुयायियों के मुताबिक, धरती पर पेट्रोलियम का निर्माण पृथ्वी की गहराई में सरल हाइड्रोकार्बन्स (कार्बन व हाइड्रोजन से बने यौगिक) के आपस में जुड़कर लम्बी-लम्बी ृँखला वाले जटिल हाइड्रोकार्बन अणुओं के निर्माण के द्वारा हुआ है। इन्हीं अपेक्षाकृत लम्बी

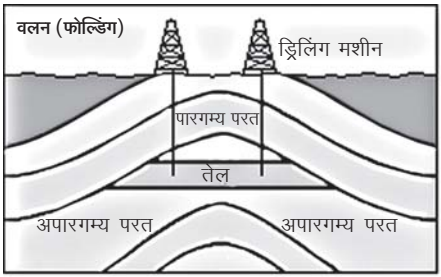

पेट्रोलियम निक्षेपों के लिए कुछ सामान्य भूवैज्ञानिक स्थितियाँ:

वलन (फोल्डिंग) - चट्टानों की विविध पारगम्य या अपारगम्य परतों में फोल्डिंग की वजह से अनेक बार तेल के संचय के लिए उपयुक्त स्थान मिल जाता है। अपारगम्य परत तेल को नीचे जाने से रोक रही है। और परतों की फोल्डिंग तेल के इकट्ठा होने के लिए जगह उपलब्ध करवा रही है।

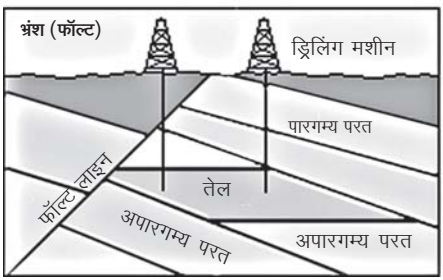

भ्रंश (फॉल्ट) - कई दफा परतदार चट्टानों में विविध बलों की वजह से टूट-फूट होकर परतें आड़ी-तिरछी या ऊपर-नीचे की ओर खिसक जाती हैं। इस खिसकाव की वजह से तेल के संचय के लिए कुछ स्थान बन जाता है। यहाँ ऐसी ही एक स्थिति को दिखाया गया है।

इनके अलावा भी धरती के भीतर अनेक संरचनाएँ पेट्रोलियम को संचित होने के लिए उपयुक्त मौके उपलब्ध कराती हैं।

ृँखला वाले जटिल हाइड्रोकार्बन्स का मिश्रण पेट्रोलियम है।

सरल हाइड्रोकार्बन किस तरह बने होंगे? इनके निर्माण के बारे में यह विचार प्रस्तुत किया गया कि जब पानी धरती की निचली परतों में रिसा तो वहाँ उसकी क्रिया लौह कार्बाइड या अन्य धात्विक कार्बाइड्स के साथ हुई जिसके फलस्वरूप एसिटिलीन या मीथेन (दोनों हाइड्रोकार्बन हैं) का निर्माण हुआ। यह क्रिया प्रयोगशाला में आसानी से होती है। लिहाज़ा यह मान लिया गया कि पेट्रोलियम की उत्पत्ति का मामला सुलट गया है। अलबत्ता, यह कोई नहीं दर्शा सका कि उन गहराइयों में लौह कार्बाइड मौजूद है।

जब कुछ नए तथ्य सामने आए, तो पेट्रोलियम की उत्पत्ति का अजैविक सिद्धान्त कमज़ोर पड़ने लगा। एक तो, यह पता चला कि प्लवकों (planktons) की एक-कोशिकीय काया में तेल की बारीक-बारीक बूँदें पाई जाती हैं। प्लवक एक-कोशिकीय जीव होते हैं जो समुद्र में कुल जीवों में से लगभग 95 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करते हैं। तेल की उपस्थिति की व्याख्या दो दृष्टि से की गई - एक तो इसके निर्माण के बारे में बताया गया कि वसीय अम्लों में पाई जाने वाली कार्बन ृँखला और इन तेलों में पाई जाने वाली ृँखला के बीच कुछ समरूपता

है। दूसरा, यह कहा गया कि तेल की इन नन्हीं-नन्हीं बूँदों की बदौलत प्लवक हल्के होकर समुद्र सतह पर तैर सकते हैं। इनका सतह के नज़दीक तैरना आवश्यक है क्योंकि यदि ये गहराई में रहेंगे तो सूरज की रोशनी न मिलने के कारण इनमें प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं हो पाएगी।

इन तथ्यों के आधार पर यह परिकल्पना प्रस्तुत की गई कि जब प्लवक मर जाते हैं तो वे समुद्र के पेंदे में बैठ जाते हैं। यहाँ उनकी कोशिका में मौजूद तेल तमाम परिवर्तनों के बाद पेट्रोलियम में बदल जाता है। कुछ लोगों का विचार है कि यह प्रक्रिया (प्लवक के तेल से पेट्रोलियम का निर्माण) दस लाख वर्ष की छोटी-सी अवधि में भी सम्पन्न हो सकती है।

प्लवक (प्लैंक्टन)

जीव वैज्ञानिक आस-पास नज़र आने वाले हर छोटे-मोटे या बड़े अन्तर को नाम देने में माहिर हैं। जैसे यह देखिए कि वे समुद्र में पाए जाने वाले जीवों को किस तरह देखते हैं। सबसे पहले तो वे उन्हें प्लैंक्टिक, नेक्टिक और बेंथिक नामक तीन समूहों में बाँटते हैं। ये शब्द उन जीवों की विभिन्न श्रेणियों के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं जो समुद्र में विभिन्न गहराइयों पर उतराते हैं। प्लैंक्टिक वे जीव हैं जो धाराओं और लहरों के भरोसे इधर-उधर मण्डराते रहते हैं। नेक्टिक जीव खुद गति कर सकते हैं जबकि बेंथिक जीव समुद्र के पेंदे में रहते हैं। ज़ाहिर है, यह काफी मोटा-मोटा वर्गीकरण है। प्लैंक्टिक जीवों को प्रायः प्लैंक्टन या प्लवक भी कहते हैं। इन्हें कुछ और आधारों पर आगे वर्गीकृत किया जाता है - आकार, ऊर्जा का स्रोत वगैरह। प्लवकों में सूक्ष्म आकार के जीवों से लेकर विभिन्न जीवों के नन्हे लार्वा शामिल हैं। फिर, ये प्रकाश संश्लेषी हो सकते हैं (ऐसे प्लवक पानी की सतह के बहुत निकट पाए जाते हैं क्योंकि इन्हें प्रकाश की ज़रूरत होती है)। अन्य प्लवक इन प्रकाश संश्लेषी प्लवकों का भक्षण करने वाले हो सकते हैं। कुछ जीव ऐसे भी हैं जो इन दोनों तरह के प्लैंक्टन के मृत शरीरों का भक्षण करते हैं। ये प्रायः गहराई में पाए जाते हैं क्योंकि यह मलबा नीचे की ओर बैठता रहता है।

प्लवकों की संख्या (प्रचुरता) विभिन्न पोषक तत्वों, खासकर लौह, की उपस्थिति पर निर्भर करती है। आश्चर्यजनक बात है कि सूखे और अनुपजाऊ इलाकों के पास के समुद्र में प्लवकों की प्रचुरता होती है। उदाहरण के लिए, यह बात अफ्रीका के पश्चिमी तट से लगे अटलांटिक महासागर में देखी जा सकती है। यहाँ सहारा रेगिस्तान की रेत उड़-उड़कर समुद्र में पहुँचती रहती है और अपने साथ पोषक खनिज तत्व लाती है।

मरने के बाद प्लवक पेंदे में बैठ जाते हैं क्योंकि जिस कार्बनिक पदार्थ से ये बने होते हैं वह पानी की अपेक्षा थोड़ा भारी होता है। ऐसा लगता है कि यह क्रिया लम्बे समय तक चलने के फलस्वरूप ही हमें सारा पेट्रोलियम मिला है।

भूविज्ञान के लिहाज़ से तो दस लाख साल की अवधि पलक झपकने के बराबर ही है। तो जब लोग आपको बताएँ कि हम जिस रफ्तार से पेट्रोलियम का उपभोग कर रहे हैं, उससे तो उसके ज्ञात स्रोत अगले कुछ दशकों में चुक जाएँगे, तो ज़्यादा फिक्र न करें। यदि मनुष्य जाति आने वाले दस लाख सालों तक यहाँ बनी रही तो उसे पेट्रोलियम के नवीन भण्डार हासिल हो जाएँगे! पेट्रोलियम के निर्माण की इस अवधि की पुष्टि इस बात से भी हुई है कि प्लायोसीन काल की कुछ तलछटी चट्टानों में तेल मिला है।

पेट्रोलियम की उत्पत्ति के इस सिद्धान्त की पुष्टि कई अन्य चीज़ों से भी हुई है। एक तो, कुछ ऐसे अणु पेट्रोलियम में जस-के-तस मिले हैं जो जीवित तंत्रों में पाए जाते हैं। इनमें सिर्फ कुछ हाइड्रोकार्बन्स ही नहीं हैं,

पेट्रोलियम के अंश और पोर्फायरिंस

पेट्रोलियम में जो विभिन्न यौगिक पाए जाते हैं, उनके आधार पर हम इसकी उत्पत्ति के बारे में क्या पता कर सकते हैं? पेट्रोलियम कई कार्बनिक पदार्थों का मिश्रण है। कार्बन काफी अनोखा तत्व है जो हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन तथा गन्धक के साथ जुड़कर यौगिक बनाता है। मगर उससे भी महत्वपूर्ण बात है कि वह कार्बन के और परमाणुओं के साथ जुड़ सकता है और लम्बी-लम्बी ृंखलाएँ बना सकता है। ये ृंखलाएँ सीधी हो सकती हैं, शाखित हो सकती हैं और यहाँ तक कि छल्ले जैसी बन्द भी हो सकती हैं।

पेट्रोलियम में उपस्थिति इन विभिन्न यौगिकों को आंशिक आसवन नामक प्रक्रिया से अलग-अलग किया जाता है। इस प्रक्रिया में एक-से क्वथनांक वाले यौगिक एक 'अंश' के रूप में अलग हो जाते हैं। ज़्यादा भारी यौगिकों का क्वथनांक भी ज़्यादा होता है। अलग-अलग स्रोतों से प्राप्त पेट्रोलियम से थोड़े अलग-अलग अंश प्राप्त होते हैं और इसके आधार पर यह बताया जा सकता है कि उसका स्रोत कहाँ है।

सजीव तंत्र में प्रकाश संश्लेषण के दौरान कार्बन को सबसे पहले ग्लूकोज़ के रूप में स्थिर किया जाता है। फिर इस ग्लूकोज़ का उपयोग कोशिकाओं की क्रियाओं के लिए ऊर्जा प्रदान करने के अलावा विभिन्न पदार्थों के निर्माण के लिए कच्चे माल के रूप में भी किया जाता है। इसकी वजह से सजीव तंत्र में बन सकने वाले कार्बन यौगिकों में कार्बन की संख्या तथा शाखन एवं द्विबन्धों के स्थान पर भी सीमा आरोपित हो जाती है।

पेट्रोलियम में आम तौर पर पाए जाने वाले अंशों में उपस्थित कार्बन ृंखलाएँ (उनमें उपस्थित कार्बन परमाणुओं की संख्या, और उनका शाखन) सजीवों, खासकर प्लवकों में पाए जाने वाले कार्बन यौगिकों का ही प्रतिबिम्ब होती हैं। और तो और, पेट्रोलियम में पोर्फायरिंस नाम के कुछ यौगिक भी पाए गए हैं जो क्लोरोफिल से काफी मिलते-जुलते हैं।

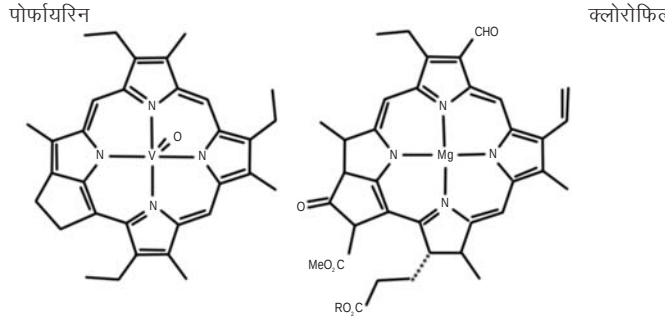

पोर्फायरिन और क्लोरोफिल की रासायनिक बनावटः दोनों में नाइट्रोजन पाया जाता है।

बल्कि पोर्फायरिंस नामक यौगिक भी हैं। पोर्फायरिंस का मिलना दिलचस्प है क्योंकि पोर्फायरिंस में नाइट्रोजन के अणु होते हैं और ये ऑक्सीजन की उपस्थिति में बहुत आसानी से विघटित हो जाते हैं। इसका मतलब है कि पेट्रोलियम का निर्माण भी अवकारक (रिड्यूसिंग) परिस्थितियों में हुआ है। पोर्फायरिंस की एक और विशेषता है कि ये उच्च तापमान (करीब 200 डिग्री सेल्सियस) पर भी विघटित हो जाते हैं। इसका मतलब यह है कि पेट्रोलियम का निर्माण भी कम तापमान पर हुआ होगा; कम-से-कम पेट्रोलियम के उन भण्डारों के बारे में तो यह कहा ही जा सकता है, जिनमें पोर्फायरिंस मिले हैं।

तो क्या लगता है, पेट्रोलियम की उत्पत्ति की गुत्थी सुलझ गई है? शायद पूरी तरह नहीं। जिस समय पेट्रोलियम की उत्पत्ति की अजैविक परिकल्पना प्रस्तुत हुई थी, लगभग उसी समय एक और सिद्धान्त उभरा था। वह सिद्धान्त था कि पृथ्वी पर पेट्रोलियम के भण्डारों का स्रोत पृथ्वी से बाहर कहीं है - एक्स्ट्रा-टेरेस्ट्रियल उत्पत्ति! दूर की कौड़ी लगती है यह? सोकेलोफ ने सुझाया था कि प्रारम्भिक बादलनुमा पदार्थ (प्राइमोर्डियल नेबुलर मैटर) जिसके संघनन से पृथ्वी और अन्य ग्रह बने थे, उसमें यह तेल भी मौजूद था और पृथ्वी पर चली भूगर्भीय प्रक्रियाओं की वजह से यह सारा तेल पृथ्वी के मैंटल में धकेल दिया गया। सोकेलोफ ने यह बात 1890 में कही थी मगर बाद में दो खोजें होने के बाद एक बार फिर इस परिकल्पना को एक नए रूप में पुनर्जीवित किया गया।

एक खोज थी कि अन्य ग्रहों के वातावरण में और यहाँ तक कि उनके चन्द्रमाओं (उपग्रहों) के वातावरण में भी मीथेन मौजूद है। यह जानी-मानी बात है कि मीथेन मुख्यतः अजैविक यानी ऐसी क्रियाओं से बनती है जिनके शुरुआती पदार्थ अकार्बनिक या अजैविक होते हैं। तो यदि मीथेन सौर मण्डल

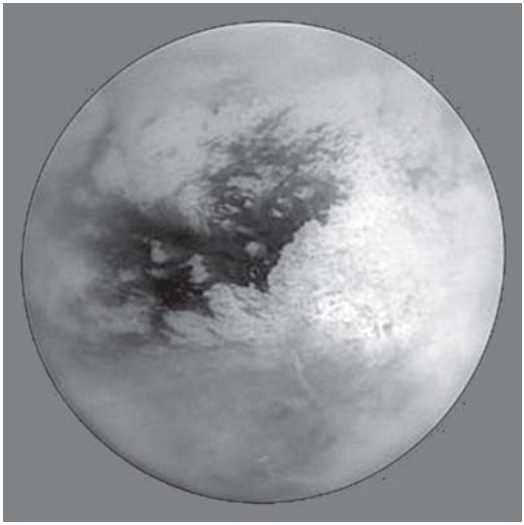

हमारे सौर्यमंडल में शनि ग्रह के एक उपग्रह टाइटन पर मीथेन की मौजूदगी की पुष्टि होने के बाद पेट्रोलियम की अजैविक उत्पत्ति की अवधारणा को बल मिला।

में उपस्थित है, तो हो सकता है कि पृथ्वी पर तापमान और दबाव की अनुकूल परिस्थितियों में यह लम्बी ृँखला वाले हाइड्रोकार्बन में तबदील हो गई हो। वही हाइड्रोकार्बन जो पेट्रोलियम में पाए जाते हैं। दूसरी खोज यह थी कि उल्काएँ भी कार्बन-आधारित हो सकती हैं। शुरू-शुरू में जिन उल्काओं का अध्ययन किया गया था, वे धात्विक थीं। दरअसल, माना तो यह भी जाता है कि पहले मनुष्य उल्काओं में उपस्थित लौह का ही उपयोग करते थे, अयस्कों में से लौह प्राप्त करना तो हमने बाद में सीखा। फिर 1960 में ऐसी उल्काएँ खोजी गईं जिनमें कार्बनिक पदार्थ थे (सिर्फ ग्रेफाइट नहीं)। इसके बाद सोकेलोफ के सिद्धान्त को नया जीवन मिल गया।

तो हमारे पास पेट्रोलियम की उत्पत्ति को लेकर दो किस्म के सिद्धान्त हैं। पहले किस्म के सिद्धान्तों में शुरुआती पदार्थ मीथेन या एसिटिलीन थे जो अजैविक प्रक्रियाओं से बने थे या प्रारम्भिक पृथ्वी पर उस पदार्थ के साथ मौजूद थे जिससे पृथ्वी बनी थी और इसी मीथेन या एसिटिलीन का पृथ्वी पर मौजूद परिस्थितियों में बहुलीकरण (पॉलीमराइज़ेशन) होकर पेट्रोलियम बना। दूसरा सिद्धान्त यह है कि कार्बन का स्रोत प्रकाश संश्लेषण है जिसमें सबसे पहले कार्बन डाईऑक्साइड को ग्लूकोज़ में बदला गया होगा। फिर ग्लूकोज़ को विभिन्न जैविक क्रियाओं के दौरान अन्य अपेक्षाकृत जटिल पदार्थों में बदला गया होगा और ये यौगिक और रूपान्तरित होकर पेट्रोलियम व तेल में बदले होंगे। हो सकता है यह अन्तिम चरण सजीव तंत्र में हुआ हो या पृथ्वी के मैंटल में, जहाँ इन यौगिकों का अनॉक्सी परिस्थितियों में विघटन हुआ होगा।

इन दो सिद्धान्तों के बीच बुनियादी विवाद का मुद्दा यह है कि पेट्रोलियम में कार्बन का स्रोत क्या है। फैसला अभी रुका हुआ है। आपका क्या ख्याल है, क्या हुआ होगा?

पेट्रोलियम कहाँ मिलेगा?

मैंने पहले कहा था कि कोयला वहाँ मिलता है जहाँ तलछटी भू-संरचनाएँ मिलती हैं। एक तो यह बात और साथ में यह तथ्य कि कोयले के साथ हमें जीवाश्म भी मिलते हैं, संकेत देते हैं कि कोयला उसी तरह से बना है, जैसे तलछटी चट्टानें बनती हैं। अन्तर सिर्फ इतना है कि कोयले के मामले में शुरुआती पदार्थ जैविक था।

मगर पेट्रोलियम की कहानी ज़्यादा पेचीदा है क्योंकि यह उन स्थानों पर भी मिलता है जो तलछटीकरण से नहीं बने हैं। उदाहरण के लिए, पेट्रोलियम कभी-कभी आग्नेय चट्टानों में मिलता है। पेट्रोलियम कुछ ऐसी चट्टानों में भी मिला है जिनकी उत्पत्ति समुद्र के नीचे नहीं हुई है। इन बातों की व्याख्या इसी आधार पर हो सकती है कि तेल (तरल होने की वजह से) अपनी उत्पत्ति के स्थान (समुद्री तलछट) से नज़दीक की आग्नेय चट्टानों में या गैर-समुद्री उत्पत्ति की चट्टानों में रिस गया होगा। इस बात की पुष्टि तब हुई जब इन असामान्य स्थानों पर मिलने वाले तेल का विश्लेषण करके उसकी तुलना नज़दीकी स्थानों पर मिलने वाले तेल से की गई। दोनों एक-से पाए गए। अर्थात् न सिर्फ यह कहा जा सकता है कि तेल का निर्माण समुद्र के नीचे (आमतौर पर कॉन्टिनेंटल शेल्फ वाले क्षेत्र में) एक-कोशिकीय जीवों की परतें जमने और उनमें हुए परिवर्तनों के फलस्वरूप हुआ है, बल्कि यह भी देखा गया है कि तेल के भण्डार प्रायः उन स्थानों पर पाए जाते हैं जो अपारगम्य चट्टानों से घिरे होते हैं। यानी एक बार बन जाने के बाद पेट्रोलियम आस-पास की चट्टानों में रिसता है और उन स्थानों तक पहुँचकर रुकता है जिसके आगे रिसाव सम्भव नहीं होता। इस तरह से पेट्रोलियम काफी दबाव वाले स्थानों में पहुँच जाता है। इसी वजह से जब किसी तेल भण्डार का दोहन करने के लिए कुआँ खोदा जाता है तो कच्चा तेल उछलकर बाहर निकलता है। इस तरह तेल निकल जाने के बाद भी उस जगह से काफी और तेल निकाला जा सकता है। इसके लिए एक पाइप में से पानी और प्राकृतिक गैस को अन्दर भेजा जाता है और इस दबाव के कारण दूसरे पाइप से तेल बाहर निकलता है। पानी के उपयोग का एक फायदा यह है कि तेल पानी से हल्का होता है और इसलिए तेल ऊपर की ओर धकेला जाता है।

क्या निकट भविष्य में कोयला और तेल चुक जाएँगे?

जवाब इस बात पर निर्भर है कि आप यह सवाल किससे पूछ रहे हैं। जो कम्पनियाँ कोयले और तेल के निष्कर्षण के धन्धे में लगी हैं, वे तो आपको यकीन दिलाना चाहेंगी कि काफी तेल और कोयला मौजूद है। ज़रूरत सिर्फ इस बात की है कि हम

पृथ्वी और विभिन्न चट्टानों की उम्र

यदि मैं यह लम्बी कहानी सुनाने लगूँ कि विभिन्न चट्टानों का सम्बन्ध अतीत के किस काल से है, और यह कैसे पता चला, तो वह एक और लेख बन जाएगा। इसलिए यहाँ मैं एक मोटा-मोटा खाका प्रस्तुत कर रही हूँ। सबसे पहली बात तो यह है कि जब भी कोई चट्टान या प्रस्तर पहचाना जाता है, तो उसका नामकरण इस आधार पर किया जाता है कि उसे सबसे पहले कहाँ देखा व रिकॉर्ड किया गया। जैसे यू.के. में एक स्थान है डेवन जिसके आधार पर डेवोनियन काल का नामकरण हुआ है। बाद में यह समझ में आया कि विभिन्न प्रस्तर हमेशा एक निश्चित क्रम में ही मिलते हैं। फिर इनकी उम्र पता करने की कई तकनीकें खोजी गईं। किसी परत-विशेष में धँसे जीवाश्म अधिकांशतः उसी काल के होते हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि अपरदन (erosion) की वजह से परत खुल जाती है और हमें उस काल के जीवाश्म वर्तमान परत पर बिखरे हुए मिल जाते हैं। मगर ऐसा कभी नहीं होता कि जीवाश्म अपेक्षाकृत गहरी व पहले की परत में मिलें। इस मामले में सामान्य नियम यह है कि कोई परत जितनी गहरी होगी, वह उतनी ही पुरानी होगी। नीचे जो समय क्रम दिया गया है उसमें सारे कालों को मोटे तौर पर ही प्रस्तुत किया गया है ताकि एक मोटा-मोटा अन्दाज़ मिल सके।

हम देखते हैं कि करीब 4.5 अरब वर्ष पूर्व पृथ्वी के निर्माण के बाद समय को किस ढंग से बाँटा गया है। 4.5 अरब मतलब 4,50,00,00,000 वर्ष। 4.5 अरब वर्ष से लेकर 50 करोड़ वर्ष पूर्व तक की लम्बी अवधि को प्री-कैम्ब्रियन कहते हैं। इस अवधि को हेडियन, आर्कियन और प्रोटेरोज़ोइक नामक छोटी-छोटी अवधियों में बाँटा गया है। जीवन की शुरुआत हरफनमौला बैक्टीरिया के रूप में 3.5 अरब वर्ष पूर्व हुई मानी जाती है। यूकेरियोटिक (यानी केन्द्रक-युक्त) कोशिका के प्रादुर्भाव से पहले यह पूरी धरती बैक्टीरिया के कब्ज़े में थी। ये यूकेरियोटिक कोशिकाएँ आज एक-कोशिकीय और बहु-कोशिकीय जीवों - वनस्पति, जन्तु, फफूँद - के रूप में मिलती हैं। ऑस्ट्रेलिया में आर्कियन काल (2.5 अरब वर्ष पूर्व) की कुछ चट्टानों में पाई गई संरचनाओं के बारे में माना जाता है कि वे शुरुआती बहु-कोशिकीय जीवों के जीवाश्म हैं। मगर आज बहु-कोशिकीय जन्तुओं के जो फायलम हमें मिलते हैं, उनमें पाई जाने वाली विविधता वाकई कैम्ब्रियन काल (50 करोड़ वर्ष पूर्व) में अचानक प्रकट हुई थी।

इसके बाद आते हैं ओडोविशियन, साइलुरियन, डेवोनियन, कार्बोनिफेरस और पर्मियन काल (50 करोड़ से 22 करोड़ वर्ष पूर्व के बीच) में। जैसा कि नाम से ही पता चलता है, कोयले के अधिकांश भण्डार कार्बोनिफेरस काल में निर्मित हुए थे। यह वह काल था जब वायुमण्डल में ऑक्सीजन की मात्रा सर्वाधिक थी। मोटेतौर पर इस पूरे समय को पेलियोज़ोइक युग कहते हैं, जिसमें कैम्ब्रियन से लेकर पर्मियन काल तक शामिल हैं। इसके बाद आता है मीसोज़ोइक काल। इसे तीन भागों में बाँटा गया है - ट्राइएसिक, जुरासिक और क्रिटेशियस (20 से 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व तक)। एक फिल्म की बदौलत हम सभी जानते हैं कि डायनासौर जुरासिक काल में विचरते थे।

अब हम सबसे ताज़ा युग की ओर चलते हैं जिसे सीनोज़ोइक कहा जाता है। इसमें दो भाग हैं - पेलियोसीन (6 करोड़ वर्ष पूर्व) और नियोसीन (2 करोड़ वर्ष पूर्व)। प्लियोसीन, नियोसीन काल का हिस्सा है। हाल में भूगर्भ वैज्ञानिक इस बात पर चर्चा करने लगे हैं कि क्यों न आधुनिक मानव के प्रादुर्भाव के बाद के काल को एन्थ्रोपोसीन कहा जाए, क्योंकि हमने पृथ्वी पर इतने गहरे असर पैदा किए हैं। आपके ख्याल में यह काल कितना लम्बा होना चाहिए?

पृथ्वी की उत्पत्ति का मोटा अनुमान 4.5 अरब वर्ष पूर्व।

ज़ाहिर है, अरबों और करोड़ों वर्षों की ये बातें ज़्यादा पल्ले नहीं पड़तीं। मुझे तो सौ साल पहले के जीवन की कल्पना करना भी मुश्किल लगता है। बहरहाल, एक सरल-सी गतिविधि है जो इन समयावधियों को सन्दर्भ प्रदान करती है। 9 मीटर लम्बा एक धागा लीजिए। यदि हम यह मानें कि यह लम्बाई पृथ्वी के अस्तित्व की पूरी अवधि (4.5 अरब वर्ष) की द्योतक है, तो आपके विचार में विभिन्न महत्वपूर्ण पड़ाव कहाँ आएँगे? एक सिरे से शुरू करके एक निशान दो मीटर की दूरी पर लगा दीजिए - यह वह समय होगा जब 3.5 अरब वर्ष पूर्व पहली बार बैक्टीरिया प्रकट हुए थे। इसके बाद? कैम्ब्रियन काल में बहु-कोशिकीय जीवों की बाढ़ आई थी जो मात्र 50 करोड़ वर्ष पूर्व (0.5 अरब वर्ष पूर्व) की बात है। यह निशान पहले निशान से 6 मीटर आगे होगा (धागे के दूसरे सिरे से मात्र 1 मीटर पहले)। डायनासौर इस बिन्दु से 50-60 से.मी. आगे पाए जाएँगे। और, कैम्ब्रियन तथा डायनासौर के बीच आप उस वक्त का निशान लगा सकते हैं जब कोयला जमा हुआ था - आपको क्या लगता है यह निशान कहाँ आएगा?

और इन्सान कब प्रकट होते हैं? उदार अनुमानों के मुताबिक ऐसे जीव, जिन्हें मनुष्य कहा जा सके, सत्तर लाख वर्षों से अस्तित्व में हैं। अन्य लोगों का विचार है कि यह अवधि मात्र 20 लाख वर्षों की है। और हम जिस *होमो सेपिएन्स* प्रजाति के सदस्य हैं, उसका वजूद तो ले-देकर 5 लाख वर्षों से ही है। तो हम अन्तिम छोर के बहुत निकट हैं, नहीं?

इन भण्डारों की खोज करने व इनमें से माल निकालने के लिए ज़्यादा नफीस टेक्नॉलॉजी का इस्तेमाल करें। कुछ मायनों में ये दावे उचित भी लगते हैं। उदाहरण के लिए, जब सबसे पहले पेट्रोलियम निकाला गया था, उस समय जब तेल अपने-आप बाहर आना बन्द कर देता था, तो कुएँ को तिलांजलि दे दी जाती थी। आजकल हम उसमें पानी और प्राकृतिक गैस ठूँसकर दबाव के ज़रिए और पेट्रोलियम निकालते हैं। तो कहा नहीं जा सकता कि आने वाले दिनों में कौन-सी नई तकनीक उभर आएगी।

मगर साथ ही, हमें इन प्रक्रियाओं की लागत पर भी विचार करना होगा। यहाँ मैं कोयले व तेल के निष्कर्षण और उपयोग की पर्यावरणीय लागत की बात नहीं कर रही हूँ। वह तो एक अलग पूरे लेख का विषय हो सकता है।

जब नए भण्डार ज़्यादा दुर्गम स्थानों पर मिलेंगे और इनके दोहन के लिए नई-नई उन्नत तकनीकों की ज़रूरत होगी, तो इन स्रोतों का उपयोग करना आर्थिक दृष्टि से अव्यावहारिक होता जाएगा। और यह स्थिति कब आएगी, इसका जवाब कोयले और पेट्रोलियम पर निर्भर नहीं है। इसका जवाब तो इस बात से मिलेगा कि इस दौरान वैकल्पिक स्रोतों का कितना विकास हो पाता है, कोयले और पेट्रोलियम की खोज व निष्कर्षण के लिए कितनी सब्सिडी दी जाती है और हमारा समाज कितनी हद तक ऊर्जा उपयोग पर निर्भर रहता है।

उमा सुधीरः एकलव्य के विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम से जुड़ी हैं। इन्दौर में निवास।
अँग्रेज़ी से अनुवादः सुशील जोशीः एकलव्य द्वारा संचालित स्रोत फीचर सेवा से जुड़े हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में गहरी रुचि।